श्रीजगद्गुरू विश्वाराध्य ज्ञानसिंहासन, जंगमवाडी मठ, वाराणसी यांचे मुखपत्र

विभूतिवैभव

वर्ष ३१ : अंक ३-४, (१२३-१२४) । जानेवारी २०२३ - जून २०२३

मठातील श्री शिवलिंग स्वामीची मूर्ती

बेटमोगरा मठ

श्री गुरू सिद्धदयाळ शिवाचार्य महाराज
श्री शिवलिंग बादशहा मठ संस्थान,
मु. पो. बेटमोगरा, ता. मुखेड, जि. नांदेड- ४३१७१५

वीरशैव अनुसंधान संस्थान
जंगमवाडी मठ, वाराणसी

डॉ. वेदप्रकाश डोंगावकर

श्रीजगद्गुरू विश्वाराध्य ज्ञानसिंहासन, जंगमवाडी मठ, वाराणसी यांचे मुखपत्र

वर्ष ३१: अंक ३-४, (१२३-१२४)।

जानेवारी २०२३- जून २०२३

वार्षिक वर्गणी रु. १०० आजीव वर्गणी रु. १००० अंकमूल्य रु. २५

संस्थापक

श्रीकाशीजगद्गुरू लिं. वीरभद्र शिवाचार्य महास्वामीजी

संरक्षक

श्रीकाशीजगद्गुरू डॉ. चंद्रशेखर शिवाचार्य महास्वामीजी

विद्यावारिधि (Ph.D.), विद्यावाचस्पति (D.Litt.)

संपादिका

उषा शेषनारायण पसारकर

बी.एस्सी.

Cell : 9359241628

व्यवस्थापक : बाबूराव मैंदर्गीकर, ३७४, उत्तर कसबा, सोलापूर (महाराष्ट्र)

Cell :9403292111

श्रीविश्वाराध्य अक्षररचना,

'पसारकर भवन', केकतउमरा, ता.जि. वाशीम (महाराष्ट्र) ४४४ ५०५

मुद्रणस्थळ : जयंती प्रिंटर्स, ३७४, उत्तर कसबा, सोलापूर ४१३ ००७

या अंकात व्यक्त झालेल्या लेखकांच्या मतांशी
संपादक वा प्रकाशक सहमत असतीलच असे नाही.

अंतरंग

संपादकीय : ज्ञानमहर्षी श्रीकाशी जगद्गुरू / ३
प.पू. श्रीजगद्गुरूंचे आशीर्वचन : पिंडस्थल १ / ५
बेटमोगरा मठ : इतिहास आणि परंपरा /
श्री ष.ब्र. सिद्धदयाळ शिवाचार्य महाराज / १३
वीरशैव आणि जातीयता / डा. भी. शि. स्वामी /२५
वीरशैव दर्शन का स्वरूप / डॉ. वेदप्रकाश डोणगावकर / ४०
श्री जगद्गुरू पलसिद्ध विजय (ओवीबद्ध चरित्र) /
शेषनारायण देवाप्पा पसारकर / ४९
यावे यावे गुरुदेवा / शि.भ.प. प्रणव कापसे /५९
वीरशैव संस्कृत वाङ्मय एक अवलोकन - एक उत्कृष्ट संशोधनपर ग्रंथ /
डॉ. वेदप्रकाश डोणगावकर / ६०
वृत्तविशेष / ६२

मार्गदर्शक मंडळ

धर्मराज काडादी, सोलापूर
रामूशेठ हेब्बळी, अंबरनाथ
सिद्धय्या हिरेमठ, सोलापूर
शिवाप्पा खके, बारळणा
प्रफुल्ल गवळी, कल्याण
नलिनी चिरमे, वाराणसी

वीरशैव दर्शन का स्वरूप

डॉ. वेदप्रकाश डोणगावकर
दर्शनशास्त्र विभागाध्यक्ष, मातोश्री शांताबाई गोटे महाविद्यालय
वाशीम

भारतीय संस्कृतिमें शैव संस्कृति का स्थान महत्त्वपूर्ण हैं। सामान्यत: संपूर्ण ब्रह्मांड के मूल कारण के रूपमें शिवतत्त्व को स्वीकार करनेवाले संस्कृतिको शैव संस्कृति कहा जाता हैं। इस शैव संस्कृतिके प्रमाण ग्रंथ आगम हैं। आगम ग्रंथ कि संख्या अट्ठाईस हैं। कामिक, योगज, चिंत्य, कारण, अजित, दीप्त, सूक्ष्म, सहस्र, अंशुमान, सुप्रभेद, विजय, नि:श्वास, स्वयंभू, अनल, वीर, रौरव, मकुट, विमल, चंद्रज्ञान, बिंब, प्रोद्गीत, ललित, सिद्ध, संतान, शर्वोक्त, पारमेश्वर, किरण, वातूल यही वह अठ्ठाईस आगम हैं। जिसका उल्लेख क्रियासार के भाग एक में हुआ हैं।[१] इनमें से कुछ आगमों में शिव और पार्वती का संवाद हैं। तो अन्य कुछ आगमों में रुद्र और बृहस्पती, शिव और रुद्र, स्कंद और शिव आदिके संवाद पाये जाते हैं। किंतु मुख्यत: यह सभी आगम शिव द्वारा प्रतिपादी हैं। जिन आगमों में(उदा. चंद्रज्ञानागम) रुद्र आदि द्वारा उपदेश किए गये हैं वह भी मुख्यत: शिवद्वारा संस्कारित हैं। इसी कारण इन्हें शैवागम कहते हैं। कहीं कहीं इन्हें शिवागम भी कहा गया हैं। आज सामान्यत: कारणागम, सूक्ष्मागम, मकुटागम, चंद्रज्ञानागम, पारमेश्वरागम, वातुलागम इत्यादी आगम उपलब्ध हैं। कहा जाता हैं कि अन्य आगम, कालचक्र में लूप्त हो गये हैं।

आगमों के विषय :

इन आगमों का मुख्य प्रतिपाद्य विषय शिवधर्म अथवा शिव संस्कार हैं। इसी मुख्य विषय को लेकर इन आगमों में शिव स्वरूप, शक्ति स्वरूप, शिवलिला स्वरूप, शांभव व्रत, शैव, शैव मत, वीरशैव, वीरशैव भेद, अष्टावरण, षट्स्थल, पंचाचार, आचार पद्धती, पूजा विधी, मंत्रोत्पत्ती, मंत्रविधी, दीक्षाविधी, लिंग प्रकार, देहचक्र, भक्त महात्म्य, प्रायश्चित विधान इत्यादी विषय देखने

१ वीरशैव अष्टावरण विज्ञान, उपोद्घात पृ. ११

को मिलते हैं।

शैव और वीरशैव:

शैव और वीरशैव दोनो शब्दोंमें 'शैव' यह पद सामान्य हैं। शैव का एक अर्थ 'शिव को मूल तत्त्व माननेवाला', ऐसा होता हैं। तात्पर्य शैव हो या वीरशैव दोनो शिव को मूलतत्त्व के रूप में स्वीकारते हैं। किंतू आचार तथा अन्य कुछ आधारपर इनमें भेद किये जाते हैं।

१) सूक्ष्मागम: में शैव परंपरा के संबंधसे शैव मतों को दर्शाया गया हैं। वहा अनादिशैव, आदिशैव, महाशैव, अनुशैव, अवान्तरशैव, प्रवरशैव और अन्तशैव इस प्रकार के सात भेद देखने को मिलते हैं। विषेश रूपसे वहा इन सात शैव भेदोंकि चर्चा जाति के आधारपर कि गयी हैं। वहा प्रत्येक जाति और वर्ण को धर्मानुग्रह अर्थात दीक्षा का अधिकार दिया गया हैं, ऐसा प्रतित होता हैं। क्योंकि वहा दीक्षा संपन्न क्षत्रिय और वैश्य को अनुशैव तो दीक्षासंपन्न शुद्र को अवान्तरशैव कहा गया हैं।[२] सूक्ष्मागम में वीरशैव को आचार के आधारपर महत्त्व दिया गया हैं। वहा आचार के आधार पर शैव के 'सामान्यशैव, मिश्रशैव, शुद्धशैव और वीरशैव' यह चार भेद बताये गये हैं।[३]

२) चंद्रज्ञानागम में 'वीरशैव' को फिरसे शैव परंपरा के मुख्य भेद में बताया गया हैं। इस ग्रंथ में बृहस्पति रुद्र से कहते हैं कि, आगमों में शैवों के कहीपर चार, कही सात, कही दस और कही इससे भी अधिक भेद कहें गये हैं, सो आप मुझे इन सबों को संग्रहीत करके सार बताईये और मेरे संशय दुर कीजिए। इस के उत्तर में रुद्र ने, 'अनादिशैव, आदिशैव, पूर्वशैव, मिश्रशैव, शुद्धशैव, मार्गशैव, सामान्यशैव और वीरशैव' यह शैवों के आठ भेद बताये हैं।[४]

३) पारमेश्वर आगम में शैव संस्कति को अधोरेखीत करते हुये 'शैव, पाशुपत, सोम और लाकुल' यह चार भेद किये गये हैं।[५] फिर शैव के अतंर्गत

---

२. अनुशैवा इति प्रोक्ता नृपा वैश्याश्च दीक्षिताः।
अवान्तराख्यशैवास्तु शूद्राश्चेद् दीक्षिता यदि।।- सूक्ष्मागम ७/१३

३. सूक्ष्मागम ७/१५,१६

४. चंद्रज्ञानागम, उत्तरभाग- १०/२-५

५. पारमेश्वरागम १/२४

मुख्य रूपसे उसी पारमेश्वरागम में 'अनादिशैव, आदिशैव, महाशैव, अनुशैव, अवान्तरशैव, योगशैव और वीरशैव' यह सात भेद किये गये हैं।[६] इसमें से वीरशैव को सर्वोत्तम कहा गया हैं।

वीरशैव का व्याख्या/लक्षण :

१) सूक्ष्मागम में आचार के आधारपर 'रागादी दोषोसे मुक्त, जो आत्मतत्त्व में विचारत रहता हैं, जो विकल्पसे शुन्य या विरक्त हो गया हैं वह वीरशैव हैं ।'[७] ऐसा कहा गया हैं।

२) चंद्रज्ञानागम के अनुसार, जो दीक्षाविधीसे अपने शरीरपर 'इष्टलिंग' धारण करता हैं, और उसी इष्टलिंग के वियोग होणेपर अथवा व्रत से परिच्युत (चुकना) होनेपर तृण के समान अपने प्राण को त्यागता हैं वह वीरव्रत रखनेवाला वीरशैव कहलाता हैं। तथा जिस भक्तका उत्साह विषेश हैं ऐसा वीरभक्त भी वीरशैव कहलाता हैं।[८]

३) पारमेश्वरागम में सामान्यत: जो तुरिया अवस्था में पोहचते हैं वह सब 'वीर' होते हैं, ऐसा कहा गया हैं। किंतु वहीपर शैव परंपरामें गुरु द्वारा बताऐ गये मार्ग पर जो चलता हैं, जो लिंगधारण करता हैं, जो लिंगके प्रति भक्ति रखते हुये सुखपूर्वक दु:ख सागरको पार करता हैं उसे वीरशैव कहा गया हैं।[९] ऐसा भी कहा हैं।

४) वातुलशुद्धाख्यं तंत्र के अनुसार, जिस ज्ञान से कैवल्य पद प्राप्त होता हैं वह ज्ञान वीरशैव हैं।[१०]

उपरोक्त आगमों के उत्तरकाल में श्रीसिद्धान्तशिखामणी, क्रियासार, लिंगधारणचंद्रिका, परमरहस्य, अनुभवसूत्र आदि ग्रंथ महत्त्वपूर्ण माने गये हैं । वहा भी निम्न रूपसे वीरशैव का अर्थ, व्याख्या कियी गयी हैं।

५) श्रीसिद्धान्तशिखामणी ग्रंथ में संग्रहीत रेणुकाचार्य-अगस्त्यमुनी के

---

६. पारमेश्वरागम १/२५

७. वीतरागादिदोषत्वादात्मतत्त्वविधारणात्। विकल्पाकशून्यत्वाद् वीरशैवमिति स्मृतम्।। - सुक्ष्मागम ७/२९

८. चंद्रज्ञानागम:- १०/३० से ३४

९. पारमेश्वरागम:- १/६६ ते ७०

१०. वातुलशुद्धाख्यं तंत्र- १०/२५

संवाद में वीरशैव कि व्याख्या देखने को मिलती हैं। वहा 'शिव और जीव के ऐक्य को महत्त्व देनेवाले तथा इस ऐक्य कि विद्या में रमणेवाले को वीरशैव कहा जाता हैं।'[११]

६) क्रियासार ग्रंथ का संदर्भ देते हुये कहा गया हैं कि, जो विकल्परहित शैव हैं वही वीरशैव हैं। तथा अन्य एक स्थलपर 'वीरोधरहितं शैवं वीरशैवं विदुर्बुधाः' कहा गया हैं। जिसका अर्थ हैं, जो विरोधरहित शैव हैं वही वीरशैव हैं।[१२]

७) विवेकचिंतामणी नामक मराठी ग्रंथ में 'असती शैव अतिरत। त्यालागी होउनियां तत्संज्ञायुक्त। असे जो पूज्यत्वे विख्यात। तो वीरशैव निरुता।।'[१३] ऐसा कहा गया हैं। अर्थात जो शिव तत्त्व में रत हैं, उससे संयुक्त हैं और जो अपने आचार-विचार से पूज्यत्व को सिद्ध होने के कारण विख्यात हैं, वह वीरशैव हैं।

८) परमरहस्य में, जो लिंग को अर्पित किये बिना अमृत हो या विष का भोग नहीं करता तथा जो लिंग के गत होने पर प्राण को त्यागता हैं वह, वीरशैव कहलाता हैं।[१४]

वीरशैव साहित्य :

'कामिक, योगज, चिंत्य, कारण, अजित, दीप्त, सूक्ष्म, सहस्र, अंशुमान, सुप्रभेद, विजय, निःश्वास, स्वयंभू, अनल, वीर, रौरव, मकुट, विमल, चंद्रज्ञान, बिंब, प्रोद्गीत, ललित, सिद्ध, संतान, शर्वोक्त, पारमेश्वर, किरण, वातूल' यह अट्ठाईस आगम वीरशैव दर्शन के मुल स्रोत हैं। मुख्य रूपसे यह आगम शिव द्वारा दिये गये उपदेश हैं। शिव के आदेश से प्रवृत्त होकर रेणुकादी पांच आचार्योंने धरतीपर वीरशैव तत्त्व-सिद्धान्त कि स्थापना कि हैं, विद्वानोंकि मान्यता हैं कि, उन पांच आचार्यो द्वारा 'पडविडी, वृष्टी, लंबन, मुक्तागुच्छ, पंचवर्ण' यह पांच सूत्र का उपदेश हुआ हैं। जिसमें क्रमशः 'परमपद, जीव उत्पत्ती-स्वरूप, ईश्वर स्वरूप, जगत स्वरूप, बंध-मोक्ष स्वरूप' का विवेचन हुआ हैं।

---

११. वीशब्देनोच्यते विद्या शिवजीवैक्यबोधिका। तस्यां रमन्ते ये शैवा वीरशैवास्तु ते मताः।। -श्रीसिद्धान्तशिखामणि ५/१५

१२. वीरशैव अष्टावरण विज्ञान, डॉ. चंद्रशेखर शिवाचार्य, उपोद्घात, पृ. १९

१३. विवेकचिंतामणि- २/६९६

१४. लिंगार्पितं विना भुंक्ते नामृतं विषमप्यथ।
गते लिंगे त्यजेत्प्राणं वीरशैवः स एव हि।।- श्रीपरमरहस्य, ३/२

इसी परंपरा में रेणुकाचार्य नामक आचार्य का श्रीसिद्धान्तशिखामणि ग्रंथ अत्यंत प्रसिद्ध हैं। उपरोक्त सभी ग्रंथो के आधार पर क्रियासार, श्रीकरभाष्य, विवेकचिंतामणी, परमरहस्य, अनुभवसूत्रम्, लिंगधारण चंद्रिका आदि ग्रंथोका भी वीरशैव साहित्य में महत्त्वपूर्ण स्थान हैं।

वीरशैव दर्शन :

सामान्यत: वीरशैव को धर्म, मत, मार्ग कहा जाता हैं। कारणागम में वीरशैव को 'धर्म' कहा गया हैं।[१५] अन्य आगम ग्रंथोंमें वीरशैव को 'मत' कहा हैं । तो परमरहस्य में इसी वीरशैव को 'मार्ग' कहा गया हैं। किंतु आगम और अन्य सार-भाष्य ग्रंथोंमें देखनेपर यह कह सकते हैं कि, वीरशैव यह केवल धर्म, मत या मार्ग नहीं हैं। अपीतु यह एक दर्शन भी हैं। मुख्यत: पारमेश्वरागम में वीरशैव को दर्शन,[१६] कहा गया हैं।

भारतीय परंपरा में 'दर्शते अनेन् इति दर्शनम्' इस प्रकार से 'दर्शन' शब्द कि व्याख्या कि जाती हैं। जिसका अर्थ जिसके द्वारा देखा जाता हैं, वह दर्शन हैं। यह दर्शन शब्द 'दृश्य' से उत्पन्न हुआ हैं। दृष्य का अर्थ देखना होता हैं। सामान्यत: हम देखने कि क्रिया चक्षू आदि इंद्रियों से करते हैं। किंतु जब हम दर्शन कि बात करते हैं तो हमें 'सामन्य' रूप से 'देखना' को 'दर्शन' नहीं समझना चाहिए। क्योंकि दर्शन में जो दश्य हैं और उसके पीछे जो अदृश्य हैं उसे देखने को दर्शन माना जाता हैं। उदाहारण के रूप में हम कह सकते हैं कि, यह भौतिक जगत दृश्य हैं किंतु इस भौतिक जगत का जो कारण हैं उसे देखना दर्शन हैं ।

वीरशैव तत्त्व :

जैसे कि सूत्र ग्रंथो के आधारपर कहा गया हैं कि, 'परमपद, जीव उत्पत्ती तथा उसका स्वरूप, ईश्वर स्वरूप, जगत स्वरूप, बंध-मोक्ष स्वरूप' यह वीरशैव साहित्य के मूल विषय हैं। इन सभी विषयों को लेकर वीरशैव साहित्य में छतीस तत्त्व, अष्टावरण, षट्स्थल, पंचाचार, शक्तिविशिष्टाद्वैत सिद्धान्त आदि विषय तत्त्व के रूप में दिखाई पडते हैं।

---

१५. कारणागम: १/२

१६. तन्त्रं तु षड्विधं प्रोक्तं षड्दर्शनविभेदत:।
वीरशैव वैष्णवं च शाक्तं सौरं विनायकम्।। -पारमेश्वरागम: १/२२

१) छत्तीस तत्त्व :-श्रीसिद्धान्तशिखामणि नामक वीरशैव साहित्यमें एक जगह छत्तीस तत्त्वों कि बात कियी गयी हैं। सामान्यत: यह छत्तीस तत्त्व जगतोत्पत्ती के तत्त्व कहें गये हैं। इनमें ईश्वर, जीव, आदि विषय भी अंतर्भुत हैं। उन छत्तीस तत्त्वों को विद्वानो द्वारा निम्न स्वरूप दर्शाया गया हैं।

१) पांच शुद्ध तत्त्व:-शिव, शक्ती, सदाशिव, ईश्वर, शुद्धविद्या

२) सात शुद्धाशुद्ध तत्त्वे :-माया, कला, विद्या, राग, काल, नियती, पुरुष

३) चार अशुद्ध तत्त्वे :-प्रकृती, बुद्धी, अहंकार, मन

४) पाच ज्ञानेंद्रिय :-कान, त्वचा, नेत्र, जीवा, नाक

५) पाच कर्मेंद्रिय :-हाथ, पांव, वाणी, गुदा, उपस्थ वा जनेंनद्रिय

६) पाच तन्मात्र :- शब्द, स्पर्श, रूप, रस, गंध

७) पाच महाभूत :-पृथ्वी, आप, तेज, वायू, आकाश[१७]

उपरोक्त छत्तीस तत्त्वों को देखने से ऐसा लगाता हैं कि, इस वीरशैव दर्शन का संबंध श्रुति, सांख्यादि दर्शन से होना चाहिए। किंतु यह संबंध अनावश्यक होगा। क्योंकि सांख्य और वीरशैव के प्रकृति में अंतर हैं। महत्त्वपूर्ण बात यह हैं कि, शिव, शक्ती, सदाशिव, ईश्वर, शुद्धविद्या, माया, कला, विद्या, राग, काल, नियती आदि को कोई स्थान नहीं हैं। अंत: उपरोक्त छत्तीस तत्त्व स्वतंत्र और भिन्न हैं। उपनिषदों में पुरुष तत्त्व का उल्लेख देखने को मिलता हैं। किंतु वहा पुरुष स्वतंत्र, मुक्त माना गया हैं। कठोपनिशद में 'अङ्गुष्टमात्र: पुरुशो मध्य आत्मनि तिष्ठति।' इन शब्दों में पुरुष का वर्णन हुआ हैं। बृहदारण्याकोपनिषद में उसे 'सब का अधिपति' कहा गया हैं । किंतु वीरशैव साहित्य में यही पुरुष शिवांश माना गया हैं । वह शिव तत्त्व के अधिन दिखाई पडता हैं । यह शिवांश होने के कारण शुद्ध हैं किंतु प्रकृति आदि तत्त्वों से संपर्क होने के कारण यह अशुद्ध भी हो सकता हैं। अंतत: यह पुरुष शुद्धाशुद्ध कहलाता हैं। तात्पर्य उपरोक्त छत्तीस तत्त्वों में से भले ही कुछ तत्त्व उपनिषद और अन्य दर्शनों के समान लगते हो, परंतु उनमें कुछ हद्द तक भेद हैं। जिसके चलते इन छत्तीस तत्त्वोंका स्वतंत्र अध्ययन होना आवश्यक हैं ।

२) अष्टावरण : -वीरशैव दर्शन में जीवनमुक्ती को महत्त्व दिया गया हैं। यह

---

१७. परमरहस्य, शे. दे. पसारकर, पृ. ६८

जीवनमुक्ती शिव-जीव ऐक्य से प्राप्त होती हैं। उसके लिए विषयों से निवृत्त होना आवश्यक हैं। अनुमल, मायामल, कर्ममल से भी निवृत्त आवश्यक हैं। क्यों कि इस प्रकार कि अवस्था में जो शिवानुभव आता हैं और उस शिवानुभव के कारण जो सुख प्राप्त होता हैं वही 'जीवनमुक्त' कहलाता हैं।[१८] इस प्रकार के जीवनमुक्ती के लिए 'अष्टावरण' का महत्त्व हैं। अष्टावरण से ही शिव और जीव के ऐक्यमार्ग प्रशस्त होता हैं। चंद्रज्ञानागम में गुरु, लिंग, जंगम, तीर्थ, प्रसाद, भस्म, रुद्राक्ष, मंत्र इन अष्टावरणों कि विस्तृत चर्चा कि गयी हैं।[१९]

वीरशैव आचार्य डॉ. चंद्रशेखर शिवाचार्य के मतानुसार, इन आठ आवरणो में से, 'गुरु, लिंग और जंगम यह तीन पूजनीय हैं। विभूति, रुद्राक्ष और मंत्र यह तीन पूजा के साधन हैं। तीर्थ (पादोदक) और प्रसाद यह दो पूजा के फल हैं।'[२०] किंतु एक अर्थ से हम इन आठ आवरणों का विभाजन, 'मूल तत्त्व, ज्ञान तत्त्व और आचार तत्त्व' इन तीन भागों में भी कर सकते हैं। तात्पर्य 'लिंग जिसे शिव, परब्रह्म कहा जाता हैं वह मूल तत्त्व हैं।' इस 'मूलतत्त्व' का ज्ञान जिनके माध्यम से होता वह 'गुरु और जंगम' 'ज्ञानतत्त्व' हैं। और प्रत्यक्ष नित्य आचरण में जिसका महत्त्व हैं वह 'विभूति, रुद्राक्ष, मंत्र, तीर्थ (पादोदक) और प्रसाद' यह 'आचारतत्त्व' हैं।

३) षट्स्थल :-छः स्थल अर्थात षट्स्थल हैं। यह 'स्थल' शब्द 'शिव' शब्द का बोधक हैं। यह षट्स्थल जीव का शिव कि ओर जाने का मार्ग हैं। पारमेश्वरागम में इस षट्स्थल को दीक्षा प्राप्त साधकों के लिए 'मुक्तिसाधन' कहा गया हैं।[२१] क्यों कि प्रत्येक दीक्षा प्राप्त जीव लिंग धारण करने पर साक्षात शिव का अंश बन जाता हैं। एक अर्थसे इस षट्स्थल को हम जीव और शिव के तादात्म्यकि छः अवस्था भी कह सकते हैं। पारमेश्वरागम में भक्त, माहेश्वर, प्रसादी, प्राणलिंग, शरण और शिवलिंगैक्य[२२] इन छः अवस्थाओं को ही षट्स्थल कहा गया हैं।

४) पंचाचार :-जीवनमुक्ती के लिए पंचाचार का महत्त्व हैं। साधक के जीवन या आचरण में जिन पांच तत्त्वों कि लाना आवश्यक हैं, वही पंचाचार हैं।

---

१८. श्रीसिद्धान्तशिखामणि- १४/४, १७/६७
१९. चंद्रज्ञानागम उत्तरपद- २/२
२०. अष्टावरण विज्ञान, पृ. ०२
२१. पारमेश्वरागम- ६/६
२२. पारमेश्वरागम- ६/८

चंद्रज्ञानागम में, 'लिंगाचार, सदाचार, शिवाचार, गणाचार और भृत्याचार'[२३] यह पांच आचार बताऐं गये हैं। इसमें से लिंगाचार और शिवाचार यह शिवतत्त्व को मूल कारण मानने कि भावना हैं। सदाचार शुद्ध व्यवहार तथा अर्पीत करने कि क्रिया का संकेत करनेवाला तत्त्व हैं। गणाचार 'शिवनिष्ठा' का परिचय करानेवाला तत्त्व हैं। यह गणाचार तत्त्व शीलयुक्त तत्त्व हैं। गणाचार के अंतर्गत ६४ शीलों कि बात कि गयी हैं। भृत्याचार स्वंय को शिवभक्तो का भक्त माननेवला, अर्थात 'नम्रता' का भाव व्यक्त करानेवाला तत्त्व हैं।

वीरशैव दर्शन कि विषेशताऐं:

वीरशैव दर्शन कि कई सारी विषेशताऐं हैं। जिनमें से कुछ खास विषेशताओं का यहा उल्लेख करना प्रासंगिक हैं।

१) वीरशैव दर्शन भगवान शिव द्वारा प्रतिपादित दर्शन हैं।

२) इस दर्शन के मुल स्रोत २८ शिव-आगम ग्रंथ हैं।

३) इस दर्शन के अनुसार शिव शक्ति से युक्त हैं।

४) शिवकि शक्ति ही पार्वती कहलाती हैं।

५) शिव के शक्ति के पांच प्रकार हैं।

६) शिव शक्ति से युक्त होने के कारण ही जगत कि निर्मिती कर पाता हैं।

७) इस दर्शन कि यह मान्यता हैं कि, जिस प्रकार शिव सत्य हैं उसी प्रकार उसकी शक्ति भी सत्य हैं और इस शिवशक्तिसे निर्मित यह जगत भी सत्य हैं।

८) इस दर्शनमें ज्ञान और कर्म, भक्ति और मुक्ति का समन्वय देखने को मिलता हैं।

९) इस दर्शनमें शिव-जीव ऐक्य के लिए दीक्षा विधी को महत्त्व दिया गया हैं। शरिरपर लिंग धारण करना यह मुख्य दीक्षा हैं। इस दीक्षा का अधिकार सभी वर्ण के स्त्री-पुरुषों को हैं।

१०) इस दर्शन के अनुसार, लिंग पूजाआदि कर्म करने में जन्म-मृत्य, ऋतुकालके सुतक बाध्य नहीं हैं।

११) इस दर्शन के अनुसार बंध और मोक्ष दोनो एक अर्थ से गौण हैं, क्योंकि यहा 'मै शिवांश हुं!' इस प्रकार के साक्षी भाव को मूल माना गया हैं।

१२) इस दर्शनमें जीव को शिव का अंश माना गया हैं। जीव का स्वरूप

---

२३. चंद्रज्ञानागम उत्तरपद- १/५-९

आत्मरूप होने के बावजूद उसके भौतिक शरिर को 'लिंगदेह' कहते हुये देह कि प्रतिष्ठा को अबादित रखने का प्रयास किया गया हैं।

१३) सत्ताशास्त्रीय अंग से इस दर्शन में शिव स्वरूप लिंग को जगत का कारण माना गया हैं ।

१४) ज्ञानमीमांसीय अंग से इस दर्शनमें प्रत्यक्ष, अनुमान के अतिरिक्त शब्द को भी प्रमाण माना गया हैं।

१५) नीतिशास्त्रीय अंग से इस दर्शन में 'अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, दया, क्षमा, दान, पूजा, जप, ध्यान' इन दस मूल्यों को धर्म संग्रहक के रूप में व्यक्त किया गया हैं।

वीरशैव का महत्त्व :

वीरशैव का महत्त्व अनन्य साधारण हैं। जिस प्रकार प्राप्य वस्तूओंमें अपवर्ग श्रेष्ठ हैं, अन्य मतोंमें शैव मत श्रेष्ठ हैं, उसीप्रकार शैवों के जो सात मत हैं उनमें 'वीरशैव' को सर्वोत्तम माना गया हैं। क्योंकि इस वीरशैव मत के आश्रय से ही सुख प्राप्त होता हैं। इस लिए लोगोंने प्रयत्नपूर्वक इस प्रकार के शैव मतोंका स्वीकार करना चाहिए।[२४] क्योंकि मुख्य रूपसे यह वीरशैव मोक्ष प्राप्ती के लिए उपयुक्त हैं। और इसी कारण सूक्ष्मागम में माता पार्वती द्वारा भगवान शिव से 'वीरशैव से मोक्ष कैसे प्राप्त होता हैं? उसके संबंध में कैसे आचरण करना चाहिए?'[२५] यह प्रश्न उपस्थित हुआ हैं। तब वहा इन प्रश्नों के संदर्भ से, 'सर्वं शिवमयं पश्येदन्यभावो न विद्यते। लिंगाअंगसम्बन्धपदार्थज्ञानं मोक्षसाधनम्।।'[२६] यह उपदेश शिव द्वारा दिया जाता हैं। अर्थात सर्वत्र शिव होने के कारण अन्य पदार्थ को नहीं देखना चाहिए। मुख्यत: लिंग और अंग यही पदार्थ हैं और इन पदार्थों कें सबंध का ज्ञान ही मोक्ष का साधन हैं।

---

२४. यथा अपवर्ग: प्राप्येषु तथा शैवमतं मम
तत्र सप्तविधानां तु वीरशैवमनुत्तमम्।।
तदाश्रयादृते देवि न पुंभिर्लभ्यते सुखम्।
तस्मात् सर्वप्रयत्नेन जन: शैवमतं श्रयेत्।। -पारमेश्वरागम: ५/१०५

२५. सूक्ष्मागम उत्तरभाग- ७/२

२६. सूक्ष्मागम उत्तरभाग- ७/८५